© 2017 IJSRST | Volume 3 | Issue 1 | Print ISSN: 2395-6011 | Online ISSN: 2395-602X
Themed Section: Scienceand Technology

पूर्व मध्यकालीन भारत में वैवाहिक सम्बन्धों का शक्तियों की प्राप्ति में योगदान

संदीप कुमार यादव
शोध छात्र
प्राचीन इतिहास संस्कृति एवं पुरातत्त्व विभाग,
इलाहाबाद विश्वविद्यालय, इलाहाबाद।

पूर्व मध्यकाल की सबसे बड़ी विशेषता राजपूतों का उदय और उनका उत्तर भारत में तमाम राजपूत राज्यों की स्थापना है। ये राज्य एक दूसरे से लड़ते थे वहीं दूसरी ओर ये वैवाहिक संबंध भी स्थापित करते थे। निश्चित ही हमारे अध्ययन के काल में वैवाहिक संबंधों का शक्तियों को पाने में महत्त्वपूर्ण योगदान रहा है यहाँ हम केवल उन्हीं संबंधों की चर्चा करेंगे जो कि किसी खास राजा के लिए बहुत अधिक लाभप्रद सिद्ध हुए और जिनके माध्यम से एक खास वंश को महत्त्वपूर्ण फायदा पहुँचा। हम यहाँ उन महिलाओं के विषय में भी चर्चा करेंगे जिन्होंने सेना एवं नागरिक प्रशासन में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई। इस परिप्रेक्ष्य में गुर्जर–प्रतीहारों, पालों, चालुक्यों, चंदेलों, चौहानों, कलचुरियों, परमारों, गहड़वालों और सेनों के वैवाहिक सम्बन्ध महत्त्वपूर्ण हैं।

पूर्व मध्यकालीन उत्तर भारत में गुर्जर–प्रतीहारों का स्थान महत्त्वपूर्ण रहा है उन्होंने न केवल लंबे समय तक विदेशी आक्रमण को रोका है बल्कि स्वदेशी विद्रोही वंशों से सफलतापूर्वक लड़े और दो दशक से अधिक समय तक केन्द्रीय भूमिका निभाई। वैवाहिक संबंधों ने गुर्जर–प्रतीहारों की शक्तियों को बढ़ाया।

चौहानों की शकम्भरी शाखा के गुआका द्वितीय ने अपनी बहन कलावती का विवाह कान्यकुब्ज के भोज प्रथम से कराया जो कि बहुत शक्तिशाली था। प्रतापगढ़ अभिलेख यह संकेत देते हैं कि इस संबंध ने भोज प्रथम[1] को सबसे अधिक ऊँचाई पर पहुँचा दिया।

प्रसाधन देवी का नाम प्रतापगढ़[2] अभिलेख (946 ई0) में मिलता है। यह संकेत देता है कि वह महेन्द्रपाल द्वितीय की माता थीं और प्रतीहारों के राजा विनायकपाल (महिपाल) (914–17 ई0) की पत्नी थीं। अभिलेख के वंशानुवली संबंधी भाग पर हम पाते हैं कि 'श्री देवथाधिन्नमा निज्ज–कुल–प्रसाधन–देवयम् उत्पन्न' यह इंगित करता है कि वह देवथाधी परिवार से थी उनका विवाह उनके पति के लिए एक राजनीतिक सहयोग था जो कि उनके आधे भाई भोज द्वितीय से सिंहासन[3] के लिए लड़ना था।

पाल जो कि पूर्व मध्यकाल की तीन शक्तियों में एक शक्ति थी जिसने बंगाल एवं बिहार पर शासन किया। गोपाल को लोगों द्वारा राजगद्दी के लिए चुना गया, उसका पुत्र धर्मपाल (770–810 ई0) उत्तराधिकारी बना। राष्ट्रकूटों के साक्ष्यों से हमें पता चलता है कि 814 ई0 के पूर्व धर्मपाल गुर्जर–प्रतीहार राजा वत्सराज, नागभट्ट द्वितीय, राष्ट्रकूट ध्रुव और गोविंद तृतीय की वजह से एक भयंकर संकट में था इस अवसर पर उसने राष्ट्रकूट राजा गोविंद तृतीय से वैवाहक संबंध बनाया उसने रन्नादेवी जो कि राष्ट्रकूट प्रमुख प्रबाला की बेटी थी, से विवाह किया। ऐसा प्रतीत होता है कि इस संबंध से वह अपनी शक्ति बढ़ाकर गुर्जर प्रतीहार राजा नागभट्ट (807–808 ई0) को हराने में समर्थ हो सका।

विग्रहपाल का विवाह लज्जा से हुआ, उनके पुत्र के भागलपुर अभिलेख से ज्ञात होता है। जो हाईहया (Haihaya) परिवार की बेटी थी। यह संबंध भी राजनीतिक शक्ति बढ़ाने के लिए बनाया गया था और इस रिश्ते से पाल राजा नारायणपाल को अधिक लाभ पहुँचा। ऐसा प्रतीत होता है कि उसके लंबे कार्यकाल में उसकी माता के अभिभावकों ने महत्त्वपूर्ण सहयोग किया। नारायण पाल का उत्तराधिकारी राज्यपाल बना जिसका विवाह राष्ट्रकूट राजा तुंगदेव की बेटी भाग्य देवी से हुआ।

चालुक्य के उदय की कहानी गुजरात इतिहास[4] के एक वैवाहिक संबंध से जुड़ी है। यह कहा जाता है कि अन्हिलपट्टक वनराज द्वारा स्थापित किया गया जो कि चापस (Chapas- 745 ई0) के पूर्वज थे। सामंत सिंह के काल में, जो कि वनराज की पीढ़ी के पाँचवे थे, तीन भाई राजी, बीजा तथा दण्डक मथुरा से अन्हिलपट्टक आये। एक दिन रानी ने घुड़सवारों की परेड पर अपनी महारत को दिखाया। वह (सामंत सिंह) उससे बहुत प्रभावित हुआ और अपनी बहन लीलादेवी का विवाह[5] कर दिया। लीलादेवी ने एक पुत्र को जन्म दिया जिसका नाम मूलराज था। मूलराज एक अच्छे व्यक्तित्व का था और गुजरात में चालुक्यों का संस्थापक बना।

हमें चालुक्य और चौहानों के बीच बेहतर राजनीतिक शक्तियों के लिए वैवाहिक संबंधों के भी साक्ष्य मिलते हैं। एक स्वयंवर में चालुक्य राजा दुर्लभ (1010–1024 ई0 तक) ने अपनी बहन का विवाह चौहान राजा महेन्द्र से किया। दुर्लभ और उसके भाई नागराज को भी महेन्द्रराज[6] की बहनें मिलीं। यह शक्तियों को बढ़ाने के लिए बहनों के परस्पर अदला–बदली का उदाहरण था।

चालुक्य राजा कर्ण (1067–93 ई0) एक कदम्ब राज कुमारी, जिसका नाम मायानल्लादेवी, से विवाह किया। इस विवाह के पीछे कुछ रोमांचित घटना हो सकती है जिससे विल्हण ने अपना नाटक 'कर्ण सुंदरी' बुना था। जयसिंह सिद्धराज, जोकि मायानल्लादेवी का पुत्र था, गुजरात का महानतम् राजा था 1093 ई0 में अपने पिता का उत्तराधिकारी बना। जब उसके पिता की मृत्यु हुई तब सिद्धराज एक छोटा बालक था।[7] जैसा कि पहले ही बताया जा चुका है कि सिद्धराज की माँ मायानल्ला देवी एक संभ्रांत परिवार से थी, अपने पति की मृत्यु के पश्चात उन्होंने प्रशासन की लगाम अपने हाथों में ले ली। सिद्धराज को युवराज बनाकर राज प्रतिनिधि का पद अपने पास रखा। उनके राजप्रतिनिधित्व के दौरान दो जल कार्य निर्मित किये गये माया

नल्लासर और मंदसौर। सोमनाथ के तीर्थयात्रियों पर से कर माफी उनके काल की सबसे महत्त्वपूर्ण घटना थी। प्रबंध चिंतामणि के लेखक मीरूतुंगा बताते हैं कि कर से बहत्तर लाख रूपक राजकोष[8] में आ गये। उन्होंने बहुत ही महंगे स्थापत्य के कार्य किये।

अगला उदाहरण रानिक देवी का मिलता है। वह सिद्धराज (1093–1143 ई0) और खेनगर के बीच विवाद की जड़ बनी। वह कुलरि के देवरा राजपूत की बेटी थी। उसका विवाह सिद्धराज से हुआ किंतु उसी समय खेनगर ने उसे बंधक बनाया (अपहरण किया) और विवाह किया। इससे सिद्धराज बहुत क्रोधित हुए और बदला लेने का निश्चय किया। उन्होंने लगातार 12 साल तक आक्रमण किया और राजा खेनगर को हराकर रानिक देवी को बुदवन लेकर आये जहाँ वह सती हो गयीं।[9]

नैकी देवी मूलराज द्वितीय और भीमदेव द्वितीय की माँ तथा अजयपाल की प्रमुख रानी थी। मूलराज द्वितीय को जब सिंहासन मिला, तब वह बालक था (1176 ई0)[10] मूलराज द्वितीय की माँ नैकी देवी के हाथों में राज्य की संपूर्ण शक्ति थी। मेरूतुंग[11] साक्ष्य में है कि वह एक बहादुर महिला थी जिसने अपनी बहादुरी दिखाई जब वह गदुरगढ़ और गदरघट्टा के मलेच्छों से अपने बेटे को अपनी जाँघ पर लेकर लड़ी। प्रबंध चिंतामणि में वर्णित किया गया है कि उनके जीवन में ईश्वर ने उनकी मदद की। असमय बरसात से उन्हें विजय प्राप्त हुई और उन्होंने मलेच्छों[12] को सफलता पूर्वक पराजित किया। वसंत–विलास[13] सुकृत संकीर्तन[14] और कृतिका उम्दी बतातें हैं कि मूलराज ने अपने बचपन में ही मुहम्मडनों को पराजित किया था। भीमदेव द्वितीय के वरवल अभिलेख[15] के अनुसार मूलराज ने हम्मीरा को युद्ध में हराया। मूलराज की सभी विजयों का श्रेय रानी नैकी देवी को जाता है। राज्य में उनका कर्मठ योगदान था। मूलराज ने एक बालक की तरह अपनी माता के राज प्रतिनिधित्व के अधीन तीन वर्ष तक शासन किया और उसकी मृत्यु हो गयी। भीमदेव द्वितीय उसका उत्तराधिकारी बना। शुरूआत में एक बालक की तरह अपने बड़े मूलराज द्वितीय की भाँति ही अपने माता के राज प्रतिनिधित्व के अधीन शासन किया।

पृथ्वीराज प्रथम के पुत्र अजयराज उनके उत्तराधिकारी बने वह अजमेर शहर के संस्थापक थे। पृथ्वीराज रासो से हम यह जान पाते हैं कि अजयराज ने दुनिया को चाँदी के सिक्कों से भर दिया था। अजयराज अपनी उपलब्धि को स्थायी बनाने के लिए जो अवसर दिया गया था वह न केवल सिक्कों को जारी करना ही बल्कि उनकी रानी सोमल्ला देवी[16] की वजह से भी था। भारी संख्या में ताँबे, चाँदी, सोने के सोमल्ल देवी के सिक्के पाये जाते हैं। सोमल्ल देवी के ताँबे के सिक्के के अग्रभाग पर एक घुड़सवार का चित्र है और पृष्ठ भाग पर रानी का नाम अंकित है। उनके चाँदी के सिक्के अपेक्षाकृत बहुत कम पाये जाते हैं, जो कि राजमुकुट की तरह हैं और वह गदहिया का पैसा (Gadhaiya ka paisa) के नाम से जाना जाता है। यह एक संकेत है कि सोमल्ल देवी का एक अहम स्थान था और वह संभवतः टकसालों पर भी नियंत्रण रखती थीं। आर्थिक प्रशासन भी उनके अधीन रहा होगा। (1132–33 ई0) में जब अजयराज की मृत्यु हुई तो रानी ने अन्य दो रानियों के साथ सती हो गयीं।

चौहान शासक सोमेश्वर की पत्नी कर्पूर देवी थी, जो त्रिपुरी के कलचुरि की राजकुमारी थीं। वह एक बहादुर महिला थीं जो इस परंपरा से थीं कि जरूरत पड़ने पर महिलाओं ने अपने देश पर राज किया है उन्हें शाही स्त्रियों की भाँति ही राज प्रशासन की उचित शिक्षा दी गयी। सोमेश्वर के दो पुत्र थे पृथ्वीराज तृतीय और हरिराज। दोनों ही बालक थे जब उनके पिता अल्पकाल में ही (8वर्ष) शासन करके मर गये। इस स्थिति में कर्पूर देवी ने अपने अवयस्क पुत्र की ओर से शासन की बागडोर अपने हाथों में ले लिया। अपने राज प्रतिनिधित्व के दौरान उन्होंने अपनी जिम्मेदारियों का निर्वहन इस प्रकार किया कि समकालीन साहित्यों ने उनकी[17] सराहना की है।

कूर्मादेवी बहादुर राजपूत समर सिंह की दानी और पत्तन की राजकुमारी थीं। समर सिंह तराइन (1192 ई0) के द्वितीय युद्ध में मारे गये थे। अपने पुत्र के अवयस्क होने के कारण कूर्मादेवी ने प्रशासन अपने हाथों में ले लिया। वह प्रशासन में दक्ष और सैन्य कला में निपुण थीं। उन्होंने असाधारण साहस का परिचय दिया जब कुतुबुद्दीन ने मेवाड़ पर आक्रमण किया और राजपूत प्रमुख अपने राजा[18] की अनुपस्थिति में असहाय हो गये थे। उन्होंने राजपूतों का नेतृत्व किया और कुतुबुद्दीन से अम्बर में युद्ध किया और पराजित करके घायल कर दिया। उपर्युक्त घटना यह इंगित करती है कि वह एक बहादुर महिला थीं।

चालुक्य कुमारपाल की बहन का नाम देवल देवी था। 'प्रबंधकोश' के अनुसार कुमारपाल की एक बहन थी जिसकी शादी चौहान अंका अर्नोराज (Arnoraja 1190–1208 ई0) से हुई जो चौहान और चालुक्यों के बीच शत्रुता खत्म करने के संदर्भ में थी। क्योंकि एक बार अर्नोराज कुमारपाल द्वारा हराये गये थे। एक बार जब अर्नोराज और उनकी पत्नी शतरंज खेल रहे थे तब अर्नोराज ने उनका अपमान किया था वह तुरंत पाटण के लिए निकल पड़ी और वहाँ पहुँचते ही कुमारपाल को बतलाया कि कैसे उनके पति ने उनके साथ व्यवहार किया है। कुमारपाल ने अपनी बहन के अपमान का बदला लेने का निश्चय लिया। अर्नोराज एक बार फिर हार गये किंतु अन्त में कुमारपाल[19] द्वारा वह पुनः अपने सिंहासन पर बैठा दिये गये।

पृथ्वीराज के कारनामें जो गीत और कहानियों में प्रसिद्ध है वे उनके राजकवि चन्द्रबरदाई के ग्रन्थ 'पृथ्वीराजरासो' के बिना मृत होते। पृथ्वीराज और कन्नौज के गहड़वाल राजा जयचन्द्र के बीच भयंकर शत्रुता थी जो कि एक कठोर और संगदिल (कठोरचित्त) शत्रु साबित हुआ। यह कहानी कुछ इस प्रकार है कि जयचन्द्र की बेटी संयोगिता के मन में पृथ्वीराज के लिए एक विशेष प्रेम पैदा हो गया था जो कि उनकी बहादुरी के किस्से और कारनामों से था। संयोगिता के भाग (episode) में हम एक नयी घटना पाते हैं जहाँ प्रेम, अपहरण और शादी की परंपरा के बाद भी पृथ्वीराज तृतीय और जयचन्द्र के बीच हुआ। पृथ्वीराज, जिन्होंने जयचन्द्र की खूबसूरत पुत्री से प्रेम किया और अपने जोश को सावधानी पूर्वक इस्तेमाल करते हुए उन्हें एक स्वयंवर से भगा ले गया जहाँ उसे संयोगिता के पिता की प्रतिद्वंदिता और भारत पर आधिपत्य की वजह से निमंत्रित नहीं किया गया था। उसके सामंतों ने भागते युगल को सुरक्षा दिया और जो सेनायें उनका पीछा कर रही थीं उनसे अपने प्रिय राजा के लिए लड़ाई की। इस तरीके से पृथ्वीराज ने राजकुमारी से

दोबारा विवाह किया और नयी रानी[20] के साथ अधिकतम समय व्यतीत किया। संयोगिता का अपहरण उत्तर भारत के दो महान राजाओं के बीच शत्रुता का कारण बना और अंततः यही वजह बनी कि भारत मुस्लिम आक्रमणकारियों के हाथों में चला गया।

दुर्लभराज तृतीय का उत्तराधिकारी उसका भाई विग्रहराज तृतीय (1136 ई0) था। जो कि विसल्ल या विशल्य के नाम से भी जाना जाता है[21] उसकी रानी का नाम राजदेवी था। यदि विसल्लदेव के वर्षों में दी गयी परंपरा में विश्वास किया जाय तो तो वह मालवा[22] के शासक की बेटी थी। किंतु इस तरह के चौहानों एवं परमारों के बीच वैवाहिक संबंध स्थापित हुए या नहीं यह निश्चित नहीं है। जबकि इतना निश्चित है कि परमार और चौहान के संबंध इस काल में उत्तम थे। पृथ्वीराज विजय के अनुसार विग्रहराज तृतीय ने मालवा के उदयदित्त को गुजरात के चालुक्य राजा कर्ण को हराने में मदद की थी।

चंदेल प्रतीहार राज्य के उत्तराधिकारी राज्य थे जो उन्होंने बुन्देलखण्ड पर स्थापित किया था। साक्ष्यों से ज्ञात होता है कि इस वंश की कुछ रानियाँ अत्यंत ही महत्त्वपूर्ण हैं जिनका अभिलेखों में वर्णन एवं प्रशंसा किया गया है।

धंग के खुजराहो अभिलेख पत्थर पर वंशावली में कंचूका स्पष्ट रूप में हर्ष (900–925 ई0) की रानी बतायी गयी हैं और यशोवर्मन्[23] (930 ई0) की राज माता, वह एक दक्ष महिला थी जो चौहान परिवार से उभरी थीं। राजा हर्ष ने अपनी शक्ति इस वैवाहिक संबंध से बढ़ायी थी।

चंदेलों के जेजाक्भुक्ति (बुंदेलखण्ड)[24] के साक्ष्यों में राज माता बतायी गयी रानी पुप्पा देवी(Puppa Devi)[25] हैं जो कि पुष्पा देवी के नाम से भी जानी जाती हैं। वह यशोवर्मन्[26] (925–50 ई0) की रानी थीं। धंगदेव इस रानी के पुत्र थे। दुर्भाग्य वश हमें इससे ज्यादा जानकारी इनके विषय में नहीं मिलती।

वह विजय पाल की रानी थी जिनका नाम और स्थान वंश सारणी में चंदेलों के अभिलेख[27] से पता चलता है। वह, देववर्मन (1050 ई0) की माँ थीं जो अपने पिता का उत्तराधिकारी था। उसकी अपनी माता में विशेष श्रद्धा थी और अपनी माँ की पुण्य तिथि पर उसने ब्राहमण अभिमन्यु को एक गाँव भेंट कर दिया था।

चंदेल वीरवर्मन् (1245–82 ई0) की प्रमुख रानी कल्याण देवी थी, वह दधीच के श्री चाडला की पोती थी।[28] अजयगढ़ साक्ष्य में कल्याण देवी को प्रमुख रानी माना जाता है। जो यह दर्शाता है कि अन्य रानियाँ इनसे नीचे थीं। प्रमुख रानी कल्याण देवी एक विशेष ओहदे पर थीं। शाही प्रशस्तिकार ने कल्याण देवी का बहुत गुण गान किया है। उनके सौम्य व्यवहार और जमीन से जुड़ी होने से तथा उनके सत्य बोलने से लोगों ने उन्हें न्याय का देवता (वसिष्ठ की पत्नी अरूंधती) उनकी शानदार पहाड़ की पुत्री, जो कि शिव के आधे शरीर गंगा और उनकी प्रेमिका काम (रती) से उनका[29] कोई मुकाबला नहीं था। अजयगढ़ अभिलेख पर यह मिलता है कि उनके उदार पवित्र कर्म जो कि निर्जरा के कुएँ का निर्माण जो अमृत के समान पानी से भरा था और अजयगढ़ में एक तालाब जो एक समुद्र की भाँति था और एक कक्ष जो कि नन्दी पुरा में शान से बना था।

परमारों का इतिहास वास्तव में सियक द्वितीय (siyaka ii) के काल से शुरू होता है उन्होंने गुजरात और सौराष्ट्र के कमजोर प्रमुखों को हराया और अपने राज्य की दक्षिणी सीमा साबरमती नदी तक ले गये। उन्होंने हूण प्रमुख को भी मालवा के उत्तर पश्चिम में और राष्ट्रकूटों को दक्कन में हराया। परमारों ने अपनी शक्ति और स्थान मुंजा (974–94 ई0) और सिंघुराज[30] (997–1010 ई0) के साथ बढ़ाया।

सिंघुराज की सबसे विशेष उपलब्धि उनकी शशि प्रभा से विवाह के संबंध का परिणाम थी। शशि प्रभा को असुगा भी कहते हैं जो नागराज शंखपाल की पुत्री थी और यही पद्मगुप्त के महाकाव्य नवसहशंक् चरित का मुख्य विषय थी। नाग प्रमुख शंखपाल बस्तर[31] में चक्रकोत्य शासक की तरह जाने जाते हैं।

परमारों के राजा उदयदित्य ने अपनी बेटी श्यामल देवी का विवाह विजय सिंह गुहिल के पुत्र से किया। इस वैवाहिक संबंध ने परमारों की स्थिति मजबूत की, जब श्यामल देवी की पुत्री अल्हण देवी का विवाह डाहल कलचुरि गयाकर्ण से हुआ। राजा उदयदित्य ने सोचा कि वैवाहिक संबंध से वह अपना ओहदा और शक्ति बढ़ा सकते हैं। उनकी दो रानियाँ थीं जिनमें एक बघेल वंश से थीं तथा दूसरी सोलंकी वंश से।

हमें वैवाहिक संबंधों का एक मात्र संकेत चन्द्रवती के परमारों जहाँ पूर्णपाल (1042–45 ई0) ने अपनी बहन लाहिनी का विवाह विग्रहराज के पुत्र चाच (chacha) से किया जो वामसार्था (vamsaratha) बोदरी (Bodari) में शासन करता था। लाहिनी विधवा हो गयी और अपने भाई के संरक्षण में रही। अभिलेखीय साक्ष्य यह बताते हैं कि लाहिनी ने एक प्राचीन सूर्य मंदिर को पुनः निर्मित कराया जिसमें संभवतः एक तालाब(1024 ई0) भी था।[32]

हमें वैवाहिक संबंधों का संकेत परमारों एवं चौहानों के बीच पुनहेरा के अभिलेख[33] से मिलता है। एक सिसिला जो कि मण्डलेश्वर महादेव मंदिर की दीवार में गुदा हुआ है वह पुनहारा (राजस्थान) में है। वंशावली संबंधी भाग में हम पाते हैं कि परमार राजा सतराजा की रानी राजश्री थीं। वह चौहानों की एक सम्मानित परिवार से थीं। यह सभी वैवाहिक संबंध राजनीति से प्रेरित थे।

11वीं शताब्दी के अंत में गहड़वाल वंश गंगा–यमुना दोआब में शक्तिशाली हुआ और कन्नौज उनकी राजधानी बनी।

गहड़वालों में कुमार देवी (1114–60 ई0) का नाम, जो कि गोविन्द चन्द्र की पत्नी थीं, जिसने बहुत ही लंबे समय तक शासन किया, वैवाहिक संबंध के रूप में आता है। कुमार देवी पीथी के शासक देवरक्षिता की बेटी थीं और उनकी पत्नी शंकर देवी थीं। यह वैवाहिक संबंध गोविन्द चन्द्र की स्थिति को मजबूत करने के लिए अत्यंत लाभप्रद सिद्ध हुआ। कुमार देवी का सारनाथ अभिलेख दर्शाता है कि गोविन्द चन्द्र की रानी एक बौद्ध[34] थीं। इस विवाह के कूटनीतिक महत्त्व के बावजूद कुमार देवी एक साधारण रानी के रूप में जानी गयी नाकि पट्टमहादेवी अथवा प्रमुख रानी की तरह।

गोविन्द की अन्य दो रानियों ने क्रमशः पट्टमहादेवी की उपाधि का लाभ लिया। कामूलीग्रांट (Kamauligrant)[35] साक्ष्य पट्ट महादेवी, नयनकाम्हा देवी को एक उपहार जबकि वांगरमऊग्रांट साक्ष्य पट्ट महादेवी गोसल देवी[36] को दूसरा उपहार देते हैं। दोनों रानियाँ शाही विशेषाधिकारों से सम्पन्न थीं। चौथा नाम बसंता देवी का वर्णन एक हस्त लेख 'अष्टसहश्रिका–प्रजन्न–प्रमित्त' (Astasaharika-prajna-paramita) में नेपाल दरबर पुस्तकालय में है।[37] बसंता देवी को गोविन्द चन्द्र देव की रजनी (Rajni) की तरह वर्णन किया गया है और वह बौद्ध धर्म के महायान सम्प्रदाय से थीं।

विजयपाल गोविन्द चन्द्र के उत्तराधिकारी बने। कटक के सोमवंशी राजा मुकुन्द देव पर विजयपाल की जीत एक वैवाहिक संबंध का परिणाम था। मुकुन्द देव ने अपनी पुत्री का विवाह विजयपाल के पुत्र जयचन्द्र (1170–1194 ई0) से कर दिया।[38]

डाहल के कलचुरियों की वंशावली में पहला प्रमुख नाम कोकल्ला प्रथम (850–890 ई0) का है। अपने समकालीन शक्तिशाली राजवंशों से संबंध सुधारने के लिए उसने वैवाहिक संबंधों का सहारा लिया।

कर्ण के बनारस प्लेट से हम यह जान पाते हैं कि कोकल्ला का विवाह नत्ता से हुआ था जो कि चन्देल वंश की राजकुमारी थीं।[39] कैम्बे प्लेट[40] से यह पता चलता है कि राष्ट्रकूट कृष्ण द्वितीय ने कोकल्ल की बेटी से विवाह किया जो उनकी प्रमुख रानी बनीं और उनसे राष्ट्रकूट शासक जगत तुंगा पैदा हुआ जिनका विवाह दो कलचुरि राजकुमारियों से हुआ। कोकल्ल भी समकालीन बंगाल के पाल शासक से वैवाहिक संबंध स्थापित किये अपने घर पर अपनी स्थिति समेकित करने के बाद कोकल्ल ने उत्तर और दक्षिण भाग के एक विशाल भू भाग पर आक्रमण किया उन्होंने जबरन कर्नाटक,[41] वंग, गुर्जर, कोंकण, शकम्भरी, तुरशाक्स (Turushkas) और रघु के पूर्वजों को गद्दी से हटाया और जीत का स्तंभ खड़ा किया।[42]

गोविन्द चतुर्थ (933 ई0) के सांगली ग्रांट से जानकारी मिलती है कि जगतुंगा का विवाह लक्ष्मी से हुआ था जो कि रामविग्रह की बेटी थी और वे कोकल्ल के बेटे थे।[43] करदा ग्रांट में यह वर्णन किया गया है कि जगततुंगा अपने पिता के अभियान के दौरान चेदि देश गये और वहाँ गोविंदाम्बा से विवाह किया जो उनके मामा शंकरगण[44] (890–910 ई0) की दूसरी बेटी थी। लक्ष्मी और गोविंदाम्बा ने प्रसिद्ध राष्ट्रकूट शासक इन्द्र तृतीय और अमोघवर्ष को क्रमशः जन्म दिया।

शंकरगण का शासन काल (890–910ई0) था कलचुरि राजा शंकरगण के पुत्र युवराज (915–45 ई0) ने नोहला से विवाह किया। नोहला चालुक्य लिनेज[45] (Lineage) की पुत्री थीं। युवराज ने राष्ट्रकूटों से पारम्परिक मैत्रीपूर्ण सम्बंधों को बनाये रखा और उसने अपनी पुत्री कंडका देवी का विवाह बडिग्गा के अमोघवर्ष तृतीय[46] से किया अपने इन्हीं संबंधों से युवराज ने अपनी शक्ति बढ़ायी और गुर्जर प्रतीहारों को हराया। युवराज देव की पत्नी नोहला भगवान शिव की उत्कट भक्त थीं उन्होंने ईश्वर शिव को निमंत्रित

किया और उन्हें उनकी शिक्षा के लिए दो गाँव भेंट किये। उन्होंने नोहलेश्वर का एक बुलंद मंदिर स्थापित करवाया जिसके आस–पास स्थित सात गाँव उसके रख रखाव के लिए दिये गये। इस अभिलेख में दिये गये विवरण से यह पता चलता है कि युवराज की पत्नी नोहला सभी राजनीतिक अधिकारों का उपयोग करती थीं। वह अपने अधिकार से युवराज की गैर मौजूदगी में अपने नाम से भी गाँव दान में दे सकती थीं। उनका विशेषाधिकार यह दर्शाता है कि चालुक्य राज पुत्री एक बेहतर राजनीतिक[47] स्थान रखती थीं। समान्यातया राजा इस तरह का समर्थन अपने रानियों को देते थे किन्तु इस स्वतंत्र वैधानिक शक्ति का उपयोग यह दर्शाता है कि नोहला का राज्य में विशेष राजनीतिक अधिकार था।

पूर्वजों की भाँति ही लक्ष्मणराज द्वितीय (945–70ई0) ने अपनी राजनीतिक स्थिति को बढ़ाने के लिए चालुक्यों से वैवाहिक संबंध स्थापित किये जो कि दक्कन में राष्ट्रकूटों के शत्रु थे। उन्होंने अपनी पुत्री बोन्था देवी का विवाह विक्रमादित्य चतुर्थ से किया जिसके पुत्र तेलप्प प्रथम ने अन्तिम राष्ट्रकूट शासक राजा कर्क प्रथम को 973 ई0 में हराया। राष्ट्रकूट कृष्ण तृतीय ने संभवतः युवराज को पराजित किया जो लक्ष्मणराज द्वितीय के पिता थे किन्तु उनके पुत्र ने परिस्थितियों को अपने पक्ष में करने के लिए चालुक्यों से वैवाहिक संबंध स्थापित करके स्वयं की रक्षा की।

रतनराज प्रथम (1045–1065ई0) कमलराज के उत्तराधिकारी पुत्र थे। जजल्लदेव के रतनपुरा शिलालेख के अनुसार कलचुरि वर्ष 866 तिथि में नोलल्ला जो कि कोमोमंडल (Komomandala) की पुत्री थी, का विवाह रतनराज के शाही भाग्य[48] के साथ हुआ। इस विवाह का राजनीतिक महत्त्व ही है क्योंकि इसने कलचुरि के साम्राज्य को बढ़ाने में मदद की थी जो कि पहले बहुत अधिक घिरा हुआ था।

यशकर्ण का उत्तराधिकारी गयाकर्ण देव बना। नरसिंह के भेड़ाघाट शिलालेख से विदित होता है कि गयाकर्ण देव का विवाह अल्हण देवी से हुआ।[49] वह विजय सिंह की पुत्री थी जो मेवाड़ अथवा प्रागवता का राजकुमार था। गयाकर्ण का उत्तराधिकारी नरसिंह था। भेड़ाघाट शिलालेख से ज्ञात होता है कि उसकी माता अल्हण देवी को एक शिव मंदिर का निर्माण विद्यायंता के नाम से बनवाया था। साथ–साथ एक मठ, एक अध्ययन कक्ष और बगीचे की कतार उससे जुड़ी थी। दो गाँवों के उपहार से मंदिर सम्पन्न था। जिसका प्रमुख साईवाचार्य रूद्राशी को बनाया गया।

रतन राज का उत्तराधिकारी उनका पुत्र पृथ्वीदेव प्रथम (1065–90 ई0) था। पृथ्वीदेव प्रथम का विवाह रजल्ला से हुआ और उनका उत्तराधिकारी जजल्लदेव उनका पुत्र था।[50] जजल्ल देव (1090–1120 ई0) अपने पिता का उत्तराधिकारी बना। चकराकोत्य बस्तर का शासक नागवंशी जजल्लदेव प्रथम द्वारा हराया गया और बन्दी बना लिया गया किन्तु वह उनकी माता रजल्ला के आदेश पर छोड़ दिया गया यह घटना यह इंगित करती है कि उनकी माता का राज भवन में ऊँचा स्थान था।

बंगाल के सेनों में भी हम वैवाहिक संबंधों के साक्ष्य पाते हैं इन्हीं वैवाहिक संबंधों से उन्होंने अपनी राजनीतिक स्थिति मजबूत की। सूर प्रमुख[51] की पुत्री विलास देवी का विवाह सेन राजा विजयसेन

(1097–1159 ई0) से हुआ।[52] इस संबंध से उसने अपनी स्थिति मजबूत की। विसल्ल देव से उसके विवाह का उल्लेख सूरा कुलम्भबोधि कौमुदि (Surakulambodhi kaumudi) बैरकपुर ग्रांट[53] में किया गया है। 11वीं शताब्दी के एक चौथाई वर्ष में सूरा दक्षिण राधा राज्य के शासक थे। यह विवाह विजयसेन के लिए कितना फायदेमंद था इसका साक्ष्य नहीं मिलता। किन्तु इससे यह निष्कर्ष जरूर निकलता है कि इसने विजयसेन को यह अवसर दिया कि वह राधा पर पूरा नियंत्रण स्थापित कर सके जो कि उसके भविष्य के कार्यों का आधार था।

संदर्भ एवं टिप्पणियाँ

1. *पृथ्वीराजविजय,* भाग–5, पृ0 31–32.
2. *तत्रैव,* भाग–14, (जी.एस. ओझा) पृ0 176–88.
3. *तत्रैव,* त्रिपाठी, आर0एस0, *हिस्ट्री ऑफ कन्नौज,* पृ0 270.
4. *जर्नल एण्ड प्रोसीडिंग ऑफ द एशियाटिक सोसायटी ऑफ बंगाल,* 1908, पृ0 107–08 *गउद लेखमाला,* पृ0 67.
5. *रसमाला,* पृ0 37.
6. *कुमारपालचरित,* भाग–1, पृ0 15. *बंगाल गजेटर ऑफ इण्डिया,* भाग–2, पृ0 156–57.
7. *एपीग्रैफिका इण्डिका,* भाग–9, पृ0 63.
8. *इण्डियन एण्टीक्वरी,* भाग–4, पृ0 235.
9. *तत्रैव,* पृ0 84.
10. *गायकवाड़ ओरिएण्टल सीरीज,* भाग–2, पृ0 76, छन्द 60.
11. *तत्रैव,* पृ0 153.
12. *रसमाला,* पृ0 159.
13. *प्रबंधचिंतामणि,* पृ0 154–55.
14. *बंगाल गजेटियर,* भाग–3, पृ0 34.
15. *तत्रैव*।
16. *आर्कियोलाजिकल डिपार्टमेन्ट भावनगर, प्राकृति एण्ड संस्कृति इंसक्रिप्सन काठियावाड़,* पृ0 210.
17. ओझा, जी0एच0, *इंडियन एण्टीक्वरी,* पृ0 209–11.
18. शर्मा, दशरथ, *अर्ली चौहान डायनेस्टीज*।
19. *पृथ्वीराजविजय,* भाग–9, पृ0 134.
20. रे., एच.सी, *डायनेस्टिक हिस्ट्री ऑफ नार्दन इण्डिया,* भाग–3, पृ0 986–87.
21. *पृथ्वीराजरासो,* भाग–7, पृ0 12.
22. *बिजौलिया इंसक्रिप्सन,* भाग–14, पी.के.जी., पृ0 133. *स्मृतिचंद्रिका,* भाग–6, पृ0 45.
23. *तत्रैव,* छन्द 14, बीसलदेवरासो, पृ0 13.
24. *अजयगढ़ रॉक इंसक्रिप्सन ऑफ कीर्तिवर्मन्, एपिग्रैफिका इण्डिका,* भाग–20, पृ0 136.
25. स्मिथ, वी0ए0, *कंट्रीव्यूशन टू द हिस्ट्री ऑफ बुंदेलखण्ड, जर्नल एण्ड प्रोसीडिंग ऑफ द एशियाटिक सोसायटी ऑफ बंगाल,* भाग–1, पृ0 1–53, *दि हिस्ट्री ऑफ द क्वायनेज आफ द चंदेल डायनेस्ट्री ऑफ बुन्देलखण्ड,* भाग–2, पृ0 665–735.
26. *एपीग्रैफिया इण्डिका,* भाग–1, पृ0 144.

27. मिश्र, के.सी., *चंदेल और इनका राजत्व काल*, पृ0 76.
28. *इण्डियन एण्टीक्वरी,* भाग–16, पृ0 205 तथा भाग–18, पृ0 238. *एपिग्रैफिया इण्डिका,* भाग–2, पृ0 198.
29. *तत्रैव,* भाग–1, पृ0 327 तथा भाग–5, पृ0 10.
30. *तत्रैव,* भाग–1, पृ0 328–30, छन्द, 15–16.
31. मजूमदार, आर.सी., *द स्ट्रगल फॉर एम्पायर*, पृ0 95.
32. *कॉपर्स इंसक्रिप्सन इण्डिकारम,* भाग–4, इण्ट्रोडक्सन, पृ0 CXX. वी. पी. मिरॉशी, *स्टडीज इन इण्डोलॉजी,* भाग–2, पृ0 66.
33. *एपिग्रैफिया इण्डिका,* भाग–9, पृ0 10–15। (द्वारा केलहार्न)।
34. *रिपोर्ट ऑफ आर्कियोलाजिकल सर्वे ऑफ इण्डिया,* 1916–17, पृ0 19–20.
35. *एपिग्रैफिया इण्डिका*, भाग–9, पृ0 319–28.
36. *तत्रैव,* भाग–5, पृ0 107–109.
37. *तत्रैव,* भाग–5, पृ0 116.
38. रे0,एच0सी0, *डायनेस्टिक हिस्ट्री ऑफ नार्दन इण्डिका*, पृ0 532.
39. *जर्नल ऑफ बिहार सोसायटी,* भाग–3 (नयी श्रृंखला), पृ0 207.
40. *कॉर्पस इंसक्रिप्संस इण्डिकेरम्*, भाग–4, आईएनएस सं0 4, पृ0 236–50, छन्द 68.
41. *एपिग्रैफिया इण्डिका,* भाग–7, पृ0 38.
42. *कॉपर्स इंसक्रिप्संस इण्डिकेरम्,* भाग–2, आईएनएस सं0 76, पृ0 6–8.
43. *एपिग्रैफिया इण्डिका,* भाग–19, पृ0 75, 78, छन्द, 4–5.
44. *तत्रैव, बंगाल गजेटियर ऑफ इण्डिया,* भाग–1, पृ0 374.
45. *इण्डियन एण्टीक्वरी,* भाग–12, पृ0 250–53.
46. *कॉपर्स इंसक्रिप्संस*, भाग–4, आईएनएस सं0 45, भाग–5, पृ0 30–39.
47. *इण्डियन एण्टीक्वरी,* भाग–12, पृ0 263.
48. *एपिग्रैफिया इण्डिका,* भाग–11, पृ0 140.
49. *कार्पस इंसक्रिप्संस इण्डिकेरम*, भाग–4, आईएनएस सं. 77, छन्द 13.
50. *कार्पस इंसक्रिप्संस इण्डिकेरम,* भाग–4, आईएनएस सं. 60, छन्द 15.
51. *तत्रैव*, छन्द 18–19.
52. आई ए एस बी, 4, एफ एन 7.
53. *एपिग्रैफिया इण्डिका,* भाग–15, पृ0 278–87.
54. *तत्रैव,* भाग–14, पृ0 156.